THE TIMES OF INDIA

Date: 19-02-26

Grammar of Justice

Courts must heed SC's message. Payment to victim in lieu of sentencing inverts justice

TOI Editorials

SC on Tuesday read high courts and trial courts a lesson on sentencing for the nth time – reducing sentences in serious crimes goes against both letter and spirit of the law and is counterproductive in the long run, since the law then is no deterrent. SC was hearing an appeal against a Madras HC order that let off an attempt-to-murder convict on the ground he would financially compensate the victim. SC called out what it described as a persistent "misunderstanding" among courts – that convicts in grave offences can be leniently sentenced if they pay off the aggrieved party.

For over two decades, SC has warned against judges projecting "undue sympathy" with "inadequate sentences that would do more harm to the justice system and undermine public confidence". In 2004, it observed that "imposing a lenient sentence without considering its effect on social order may be a futile exercise." It underlined serious offences – crimes against women top of the list – that demand proportionate punishment regardless of compensation or mitigating circumstances. Indeed, undue sympathy is most egregiously evident in cases involving crimes against women. Last March, SC took cognisance of an Allahabad HC order that almost carved out a new category of offence – "preparation to commit rape", which would invite a lighter sentence. SC overturned that order too. But the pattern is all too familiar. Far too many judges in far too many courts have discussed or ordered that survivors of sexual assault should "marry the rapist" or accept payment as closure. Such orders invert justice.

Compensation has its place in criminal justice. Victim compensation acknowledges harm. But compensation in lieu of punishment is no justice. When courts dilute statutory punishments, they weaken deterrence and send a troubling signal that grave crimes are negotiable. Criminal law isn't a bargain between offender and victim. It is strange high courts have to be reminded of that.

THE HINDU

Date: 19-02-26

Troubled waters

Concerns about the Nicobar project should have got a fair appraisal

Editorial

Proponents of the controversial Great Nicobar Project will be enthused by an order from the Kolkata bench of the National Green Tribunal (NGT) ruling that all environmental safeguards are in place, that the potential impact of this gargantuan project on resident native populations of the region is duly accounted for, and the project's "strategic utility" is reason enough for the government to not be fully transparent with what it shares in the public domain. But the dominant narrative around the project mirrors the classic development versus environment conflict of a pristine Pandora being ravaged for the greed of far-away mainlanders. The Great Nicobar Island Project (GNIP) envisages a trans-shipment port, an international airport, township development, and a 450 Megavolt-Amperes (MVA) gas and solar-based power plant. In the early 20th century, the British Phosphate Commissioners (a joint venture of the U.K., Australia, and New Zealand) began large-scale phosphate mining for fertilizer on Nauru and Banaba in the Pacific Ocean. By 1945, the island had been so physically devastated by strip mining that it was deemed uninhabitable. The native Banabans were forcibly relocated to Rabi Island in Fiji, over 2,000 kilometres away. Today, Banaba is a desolate landscape of jagged limestone "pinnacles" and the displaced population is fighting for the rehabilitation of its homeland. These serve as historical precedents for why economic logic alone cannot dictate actions in remote territories. Though accorded an environment and preliminary forest clearance by the Union Environment Ministry, concerns about the potential loss of biodiversity, tree-felling, and impact on resident tribes prompted the NGT to order a review of the environmental aspects of the project.

Independent scientists and environmentalist groups have said that the felling of tracts of pristine tropical forest — nearly nine lakh trees across 130 sq.km — for this project would significantly harm the biodiversity of the region and constitute an irreparable loss. This is not counting the disturbance to leatherback turtle nesting grounds and the assault on the corals. There was also the contested matter of whether the community rights of the local Shompen and the Nicobarese tribes were fully settled under the requirements of the Forest Rights Act. Recently, members of the Tribal Council said they were being coerced to sign "surrender certificates" that implied their consent to large parts of their land being diverted for the project. The NGT order essentially rubber-stamps the government's appraisal process without independently examining the concerns raised. It only imposes faith that the government will be a conscientious executor of the project. Whether the Great Nicobar Project is a 'net good' can only be judged by future generations, but the lack of a process that offers a fair appraisal of independent concerns bodes ill for the present.

दैनिक भास्कर

Date: 19-02-26

देश अब एआई के चैटबॉट उपयोग से आगे बढ़ रहा है

संपादकीय

इन्फोसिस और एन्थ्रोपिक के संस्थापकों नंदन नीलेकणी और डेरियो अमोदेई ने समझौते की घोषणा की है। इसका अर्थ है दुनिया के शेयर बाजारों में तहलका मचाने वाला फ्रंटियर मॉडल क्लॉड अब भारत में टोपाज के जरिये यूटिलिटी यानी एप्लिकेशन के धरातल पर उतरेगा। ठीक उसी दिन आईटी मंत्री ने ऐलान किया कि भारत एआई का यूपीआई बनाकर गवर्नेंस और बहुआयामी उपयोगिता में नई छलांग लगाएगा। न भूलें कि नीलेकणी की केंद्रीय भूमिका आधार ही नहीं यूपीआई में भी रही है। उधर एन्थ्रोपिक भी दुनिया में एआई सेफ्टी कंपनी के रूप में जाना जाता है। मंत्री ने कहा कि भारत का एआई एप्लिकेशन वाला हर मॉडल कानून और भारतीय संस्कृति की कसौटी पर खरा उतरेगा और पूर्णतः सुरक्षा - सम्प्रभु होगा। याद करें कि यूपीआई ने देश के सदियों पुराने लेन-देन को कैश से डिजिटल में बदल दिया था। अब एआई का यूपीआई -करण करके इसे देश के गवनेंस, उत्पादन, शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में एक क्रिएटिव एजेंट के रूप में लाया जाएगा। कृषि में भारत - विस्तार एप बहु-भाषी होगा, जिसके जरिये किसान तमाम योजनाओं की जानकारी भारती नामक एआई सहायक से ले सकेगा। एर्जेटिक एआई से एमएसएमई इकाइयां अपने उत्पाद और कच्चे माल का क्वालिटी चेक कर सकेंगी और बिजली खर्च घटा सकेंगी। स्वास्थ्य सेवाओं में आई का प्रयोग संवेदनशील होगा, लिहाजा सरकार ने इसके लिए 'सही' नामक इंफ्रास्ट्रक्चर तैयार किया है। हम अब एआई के चैटबॉट मोड से आगे बढ़ रहे हैं।

Date: 19-02-26

बदलती दुनिया में हमारी जगह कहां है?

आशुतोष वार्ष्णेय ब्राउन यूनिवर्सिटी, (अमेरिका में राजनीति विज्ञान के प्रोफेसर)

1945 के बाद जो वैश्विक व्यवस्था बनी थी, वह अब बिखरने के कगार पर है। उस व्यवस्था के दो मुख्य पहलू थे- सुरक्षा और अर्थव्यवस्था। सुरक्षा उस समय की वैश्विक व्यवस्था की बुनियाद थी। सिर्फ तीन दशकों में दो भयानक विश्वयुद्ध होने के बाद युद्ध को रोकना अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था की सबसे बड़ी प्राथमिकता बन गया था।

इसका मतलब था कि 'महाशक्तियों' के बीच युद्ध न हो। भारत, पाकिस्तान, चीन, कंबोडिया, वियतनाम, मलेशिया, इंडोनेशिया, उत्तर और दक्षिण कोरिया जैसे देश आपस में या कभी-कभी बड़ी शक्तियों की ओर से लड़ सकते थे, लेकिन यूरोप में या सोवियत संघ और अमेरिका के बीच, या जापान और अमेरिका के बीच युद्ध नहीं होना चाहिए। इस व्यवस्था को बनाए रखने के लिए संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद, नाटो (नॉर्थ एटलांटिक ट्रीटी ऑर्गनाइजेशन) और पूर्वी एशिया में अमेरिका के रणनीतिक वादे अहम थे।

उस समय एक ग्लोबल इकोनॉमी सिस्टम भी बना, लेकिन वह सुरक्षा व्यवस्था के मुकाबले कम महत्वपूर्ण था। इसके मुख्य आधार थे- जनरल एग्रीमेंट ऑन टैरिफ एंड ट्रेड (गैट), जो बाद में विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) बन गया; डॉलर, जो अंतरराष्ट्रीय रिजर्व मुद्रा बन गया और मुख्य रूप से अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) के जरिए आर्थिक संतुलन को संभालना। जबकि 1914 से 1945 के बीच अर्थव्यवस्थाएं भारी टैरिफ पर आधारित थीं और मुक्त व्यापार से बचा जाता था। उस समय कोई अंतरराष्ट्रीय रिजर्व मुद्रा भी नहीं थी।

अमेरिका सुरक्षा और आर्थिक- दोनों व्यवस्थाओं का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा था। उसकी मौजूदा सरकार की बदलती नीतियों से साफ है कि वह क्या करना चाहती है। ट्रम्प का अमेरिका 'नाटो' को निशाना बनाकर 1945 के बाद बनी सुरक्षा व्यवस्था को कमजोर करना चाहता है और दुनिया भर में टैरिफ लगाकर पुरानी आर्थिक व्यवस्था को भी बदलना चाहता है।

टैरिफ का इस्तेमाल अब सिर्फ आर्थिक नीति के रूप में ही नहीं, बल्कि भू-राजनीतिक हथियार के रूप में भी हो रहा है। ट्रम्प का कहना है कि दूसरे विश्वयुद्ध के बाद इन व्यवस्थाओं से अमेरिका को जो भी फायदा हुआ हो, आज ये अमेरिकी हितों को नुकसान पहुंचा रही हैं। अगर अमेरिका को नुकसान हो रहा है तो वह क्यों झेले? उनका 'मागा' समर्थक वर्ग भी इससे सहमत है।

मुद्दा यह नहीं है कि यह सही है या गलत। कोई भी तर्क दे सकता है कि अमेरिकी नीति में यह बदलाव गलत है, लेकिन जब तक ट्रम्प सत्ता में हैं, इन नई भू-राजनीतिक और आर्थिक सच्चाइयों को नजरअंदाज करना जोखिम भरा होगा।

इसके अलावा, जब गठबंधन आधारित सुरक्षा व्यवस्था कमजोर होती है, तब 'शक्ति संतुलन' का सिद्धांत ज्यादा अहम हो जाता है। 1945 से पहले ताकतवर देश इसी सिद्धांत पर दुनिया चलाते थे। आज के बदलाव को प्राचीन यूनानी इतिहासकार थ्यूसीडाइडस के शब्दों में समझा जा सकता है : 'ताकतवर वही करते हैं जो वे अपनी ताकत से कर सकते हैं और कमजोर वही मानते हैं जो उन्हें मानना पड़ता है।' ट्रम्प का अमेरिका इसी सोच में विश्वास करता है।

भारत कमजोर नहीं है, लेकिन अमेरिका के मुकाबले उसकी स्थिति क्या है? अमेरिका की जीडीपी 30 ट्रिलियन डॉलर से ज्यादा है, जबकि भारत की करीब 4 ट्रिलियन है। अमेरिका में प्रति व्यक्ति आय 85,000 डॉलर है, जबकि भारत में यह 3,000 डॉलर से भी कम है।

कनाडा के प्रधानमंत्री मार्क कार्नी के शब्दों में, भारत को ज्यादा से ज्यादा एक 'मिडिल पावर' कहा जा सकता है। भारत जल्द ही दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन सकता है, यह सही है पर यह भ्रामक भी हो सकता है।

अमेरिका की अर्थव्यवस्था भारत से करीब आठ गुना बड़ी है और प्रति व्यक्ति आय के मामले में 28 गुना ज्यादा है। सिर्फ 3,000 डॉलर प्रति व्यक्ति आय वाला देश 'महाशक्ति' नहीं बन सकता। यही वह जगह है, जहां भारत और चीन के बीच बड़ा फर्क दिखता है।

1990 के दशक तक चीन भी भारत जितना गरीब था, लेकिन आज अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उसकी सौदेबाजी की ताकत भारत से कहीं ज्यादा है। वजह साफ है- उसकी जीडीपी और प्रति व्यक्ति आय दोनों भारत से लगभग पांच गुना ज्यादा हैं। भारत के आधिकारिक दावों से लगता है कि उसकी सौदेबाजी की ताकत मजबूत है, लेकिन उसके पास ज्यादा विकल्प नहीं हैं।

अगर भारत अमेरिका से दूरी बनाता है, तो ताकत का यह बड़ा अंतर उसके फैसलों की सीमाएं तय करेगा, लेकिन निकट भविष्य में अमेरिका से दूरी बनाना संभव नहीं है, क्योंकि अमेरिका भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है। भारत का 20 फीसदी निर्यात अमेरिका जाता है। भारत की सॉफ्टवेयर क्रांति भी काफी हद तक अमेरिकी बाजार पर टिकी रही है।

एक और पहलू है, जिस पर कम ध्यान दिया जाता है। यह 'चाइना प्लस वन' रणनीति से जुड़ा है, यानी चीन के अलावा किसी और देश में निवेश करना। चीन और अमेरिका के बीच बढ़ते तनाव के कारण कई कंपनियां चीन के बाहर निवेश पर विचार कर रही हैं, लेकिन वे बड़ी संख्या में भारत आएंगी, यह साफ नहीं है। अगर अमेरिका निर्यात पर भारी टैरिफ लगाता है, तो 'मेड इन इंडिया' या 'असेंबल्ड इन इंडिया' उत्पादों के लिए अमेरिकी बाजार में जगह बनाना मुश्किल होगा।

एक सवाल उठता है- क्या आज की सीमाओं को भविष्य के मौके में बदला जा सकता है? अमेरिका, यूरोपीय संघ और ब्रिटेन की कुल जीडीपी दुनिया की कुल जीडीपी की 43-44 फीसदी है। भारत के इन तीनों के साथ व्यापार समझौते हो चुके हैं। कनाडा के साथ भी समझौता दूर नहीं है।

इसलिए आर्थिक ताकत बढ़ाने का मौका बन सकता है। अगर श्रम आधारित सेक्टरों को सही समर्थन मिले, तो क्या भारत इस मौके का उपयोग रोजगार बढ़ाने वाली मैन्युफैक्चरिंग के लिए कर सकता है? व्यापार समझौते से अगर भारत को अमेरिकी बाजार में पहुंच मिलती है, तो उसे साथ ही अपनी अर्थव्यवस्था को विविध बनाते रहने की कोशिश भी करनी होगी।

व्यापार समझौतों को आमतौर पर आर्थिक फायदे के आधार पर परखा जाता है, लेकिन यह सिर्फ आर्थिक मामला नहीं होता, खासकर बदलते हुए वैश्विक हालात में। आज कोई भी व्यापार समझौता राजनीति से जुड़े मुद्दे भी सामने लाता है।

दैनिक जागरण

Date: 19-02-26

एआई क्रांति की चुनौतियां

संपादकीय

जब एआइ इंपैक्ट समिट के कारण भारत देश-दुनिया के आकर्षण का केंद्र बना हुआ है, तब यह अच्छा नहीं हुआ कि इस अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन के एक्सपो में एक निजी यूनिवर्सिटी ने चीनी रोबोटिक डाग को अपना बताकर प्रस्तुत कर दिया। देश को असहज करने वाली गलगोटिया यूनिवर्सिटी को एक्सपो से बाहर का रास्ता दिखाकर बिल्कुल सही किया गया।

यह स्वाभाविक है कि विदेशी मीडिया माध्यम इस प्रकरण को तूल देने में जुट गए, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि अपने ढंग के विशिष्ट इस वैश्विक सम्मेलन की महत्ता को अनदेखा कर दिया जाए। इतना अवश्य है कि उक्त प्रकरण से भारत सरकार को चेत जाना चाहिए और यह सुनिश्चित करना चाहिए कि एआइ तकनीक विकसित करने के नाम पर नकल न होने पाए और न ही इस क्षेत्र की कंपनियां विदेशी कंपनियों पर आश्रित होने पाएं।

आज जब दुनिया एआइ क्रांति के मुहाने पर है एवं भारत इस क्षेत्र की तीसरी सबसे सक्षम शक्ति बनने की तैयारी कर रहा है और इसी कारण दुनिया भर की नामी एआइ कंपनियां देश में दिलचस्पी लेने के साथ भारी निवेश भी कर रही हैं, तब फिर सरकार को एआइ क्रांति की चुनौतियों से सावधान रहने के साथ उससे उत्पन्न हो रहे अवसरों को भुनाने के लिए कोई ठोस रूपरेखा बनानी चाहिए।

यह ठीक है कि सरकार की ओर से एआइ के उपयोग और उससे मिलने वाले लाभों के बारे में बताया जा रहा है, लेकिन उसे कैसे, किन क्षेत्रों में और किस सावधानी के साथ अमल में लाना है, इसका खाका बनाने का काम टेक्नोक्रेट को करना चाहिए, ताकि शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, उद्योग से लेकर शासन-प्रशासन में इस तकनीक के उपयोग को लेकर पूरी तरह स्पष्टता रहे।

एआइ क्षेत्र की भारतीय कंपनियों को इस तथ्य से परिचित होना आवश्यक है कि भाषाई एवं सामाजिक विविधता और आर्थिक विषमताओं के कारण उन्हें एआइ टूल्स अलग तरह से विकसित करने होंगे। इस तकनीक का न केवल भारतीयकरण होना चाहिए, बल्कि उसे अंतरराष्ट्रीय कंपनियों के प्रभुत्व से मुक्त भी होना चाहिए। ऐसा होने पर ही एआइ सर्वजन हिताय और बहुजन सुखाय के मंत्र को सिद्ध कर सकेगी।

भारत को इस तकनीक की खपत के केंद्र के रूप में नहीं, बल्कि उसके शोध एवं विकास में आत्मनिर्भर देश के रूप में उभरने का संकल्प लेना होगा। इस संकल्प की सिद्धि संभव है, क्योंकि यूपीआइ संबंधी तकनीक में भारत एक उदाहरण पेश करने में सक्षम साबित हुआ है।

एआइ अकल्पनीय संभावनाओं वाली नई तकनीक है, जो निरंतर उन्नत हो रही है, पर उसके दुरुपयोग के खतरे भी हैं। इसलिए सरकार को अपने लोगों और विशेष रूप से छात्रों को एआइ की विशेषताओं एवं जटिलताओं से परिचित कराना आवश्यक है। यह सही समय है कि शिक्षा संस्थानों में एआइ के पठन-पाठन पर विशेष ध्यान दिया जाए।

Date: 19-02-26

असीमित संभावनाओं वाली मैत्री

श्रीराम चौलिया।, (स्तंभकार 'फ्रेंड्स: इंडियाज क्लोजेस्ट स्ट्रैटेजिक पार्टनर्स' नामक पुस्तक के लेखक है)

मुंबई में फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुअल मैक्रों की जागिंग केवल एक प्रमुख राष्ट्राध्यक्ष की कसरती कवायद न होकर भारत-फ्रांस संबंधों की गतिशीलता का भी प्रतीक रही। इन दो सदाबहार मित्र देशों के रिश्ते निरंतर प्रगाढ़ होते जा रहे हैं। द्विपक्षीय रणनीतिक साझेदारी को 'विशेष वैश्विक रणनीतिक साझेदारी' का नया दर्जा दिया जाना ही दर्शाता है कि पेरिस और नई दिल्ली के बीच तालमेल कितना व्यापक और बहुआयामी होता जा रहा है। दोनों देशों के रिश्ते समय की हर कसौटी पर खरे उतरे हैं। इसके पीछे मुख्य कारण है विदेश नीति में रणनीतिक स्वायत्तता को प्राथमिकता देना।

यहां तक कि शीत युद्ध के दौरान जब पश्चिमी देशों ने गुटनिरपेक्ष भारत के प्रति शंकालु रवैया रखते हुए उपेक्षा की नीति अपनाई थी, तब भी फ्रांस नाटो के अन्य सदस्यों के मुकाबले भारत के प्रति सहिष्णुता रखता था, क्योंकि फ्रांस अमेरिका के दबाव में रहकर निर्णय नहीं लेना चाहता था। भारत द्वारा 1998 में परमाणु परीक्षण के बाद फ्रांस इकलौती पश्चिमी शक्ति थी, जिसने नई दिल्ली पर आर्थिक प्रतिबंध नहीं लगाए थे। इतना ही नहीं, उसने परमाणु ऊर्जा सहयोग में भी कोई कमी भी नहीं आने दी थी।

भारत को एक स्वतंत्र शक्ति केंद्र, विश्वसनीय लोकतंत्र और बड़े आर्थिक अवसर के रूप में अगर किसी ने सबसे पहले मान्यता देना आरंभ किया तो यह फ्रांस ही था। फ्रांस में सतत रूप से यह सहमति रही है कि अगर यूरोपीय संघ को अमेरिका और चीन से अलग अपनी पहचान एवं साख बनानी है तो भारत का साथ अनिवार्य है। इन्हीं भावनाओं की ताजा अभिव्यक्ति मैक्रों के भारत दौरे पर दिखी। मैक्रों ने कहा कि दोनों पक्ष हिंद-प्रशांत से लेकर प्रौद्योगिकी के स्तर तक 'किसी भी प्रकार के वर्चस्व के विरुद्ध हैं।' उन्होंने अपने संबंधों की तुलना 'संप्रभु गठबंधन' से भी की।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने इसी संदर्भ में कहा कि दोनों देश 'बहुध्रुवीय विश्व' में विश्वास रखते हैं और उस ध्येय की प्राप्ति के लिए प्रयासरत भी हैं। इसका यही मर्म है कि फ्रांस और भारत महत्वपूर्ण क्षेत्रों में मिलकर काम करेंगे, ताकि वे अमेरिका या चीन की राह पर ही चलने को विवश न हों। संभव है कि ये किसी तीसरे विकल्प का ही मार्ग प्रशस्त करें। तीसरे विकल्प की संभावनाएं अकारण भी नहीं हैं। हाल के दिनों में अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप का यूरोप के प्रति अपमानजनक रवैया और चीन की आक्रामक व्यापार नीतियों ने यूरोप को आहत किया है। इससे भी फ्रांस के तीसरे विकल्प की आकांक्षा को बल मिला है।

सामरिक मोर्चे पर भी भारत-फ्रांस रिश्ते उड़ान भर रहे हैं। इसे इससे आंका जा सकता है कि आज फ्रांस रूस के बाद भारत को हथियार आपूर्ति करने वाला दूसरा सबसे बड़ा निर्यातक बन गया है। लड़ाकू विमानों, पनडुब्बियों और इंजनों की बिक्री और संयुक्त उत्पादन के लिए जिस गति से समझौते हो रहे हैं, उसे देखते हुए आने वाले वर्षों में अगर फ्रांस रूस को पीछे छोड़कर पहले पायदान पर पहुंच जाए तो कोई हैरत की बात नहीं होगी। चीन की काट और एशिया में शक्ति संतुलन के लिए भारत के साथ फ्रांस द्वारा सह-निर्मित और सह-उत्पादित राफेल विमान, एच 125 हेलीकाप्टर, हैमर प्रक्षेपास्त्र, स्कार्पीन पनडुब्बियां और पांचवीं पीढ़ी के जेट इंजन महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे।

यह भी ध्यान रहे कि फ्रांस चीन या पाकिस्तान को कोई भी मारक हथियार नहीं बेचता है, जबकि रूस चीन को अत्याधुनिक अस्त्र-शस्त्र देता आ रहा है। फ्रांस-भारत द्विपक्षीय सैन्य सहयोग अस्त्रों तक भी सीमित नहीं है। उभरती और महत्वपूर्ण प्रौद्योगिकियों पर ध्यान केंद्रित करते हुए दोनों देशों ने 'संयुक्त उन्नत प्रौद्योगिकी विकास समूह' स्थापित किया है, ताकि विरोधियों पर सैन्य प्रतिस्पर्धी बढ़त बनाए रखी जा सके। ऐसे में प्रधानमंत्री मोदी का यह दावा कि हमारी आपसी साझेदारी 'गहरे महासागरों से लेकर सबसे ऊंचे पहाड़ों तक' असीमित रूप से आगे बढ़ सकती है, अतिशयोक्ति नहीं है।

नवाचार एक और क्षेत्र है, जिसमें फ्रांस और भारत कई महत्वाकांक्षी पहल कर रहे हैं। इस क्रम में 'भारत-फ्रांस नवाचार संघ' दोनों देशों के विज्ञानियों, शोधकर्ताओं, व्यापारियों और उद्यमियों के लिए अपार संभावनाओं के द्वार खोलेगा। एआइ, अंतरिक्ष और विमानन जैसे क्षेत्रों में फ्रांस और भारत की सक्रियता बढ़ रही है। एआइ के महाकुंभ कहे जाने वाले शिखर सम्मेलनों की शुरुआत भी फ्रांस और भारत ने ही की थी। दोनों पक्ष 'एआइ के लोकतंत्रीकरण' और 'वैश्विक एआइ की खाई को पाटने' जैसे सिद्धांतों को बढ़ावा दे रहे हैं। भारत जैसे विकासशील देश को अगर वैश्विक स्तर पर 2047 तक शीर्ष तीन एआइ महाशक्तियों में शामिल होने के मोदी के संकल्प को साकार करना है तो इसमें फ्रांस और अन्य विकसित एवं वैज्ञानिक रूप से उन्नत देशों की सहभागिता बहुमूल्य होगी।

चूंकि फ्रांस की आवाज को यूरोपीय संघ की आवाज भी माना जाता है तो उसके साथ प्रगाढ़ होती मित्रता के भारत के लिए गहरे गुणात्मक प्रभाव भी होंगे। बीते दिनों यूरोपीय संघ के साथ हुआ बहुप्रतीक्षित व्यापार समझौता इसकी एक बानगी रहा। अफ्रीका में भी फ्रांस नए सिरे से अपने छवि को ढालने की कोशिश कर रहा है और भारत के साथ त्रिकोणीय सहयोग से तमाम पहलों को अमल में लाने का इच्छुक है। हिंद महासागर और हिंद-प्रशांत में फ्रांस की प्रत्यक्ष उपस्थिति से भी भारत को कई रणनीतिक लाभ मिले हैं। भारत और फ्रांस की मित्रता ने सदैव ठोस परिणाम दिए है और हम इसे लेकर आशान्वित हो सकते हैं कि 'विशेष वैश्विक रणनीतिक साझेदारी' के नामांतरण के बाद यह जोड़ी दुनिया के कई हिस्सों में अपना रंग दिखाएगी।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 19-02-26

संघीय हस्तांतरण का पुनर्संतुलन जरूरी

गोविन्द राव, (लेखक राष्ट्रीय लोक वित्त एवं नीति संस्थान के निदेशक और चौदहवें वित्त आयोग के सदस्य रहे हैं।)

हमारे संविधान निर्माताओं ने यह व्यवस्था की थी कि राष्ट्रपति हर पांच वर्ष में एक वित्त आयोग की नियुक्ति करेंगे जो केंद्र और राज्यों के बीच वित्तीय संसाधनों का उचित वितरण सुनिश्चित करेगा ताकि वे सातवीं अनुसूची के अंतर्गत मिले कार्यों को पूरा कर सकें। वे हर राज्य को मिलने वाली हिस्सेदारी खुद संविधान में भी लिख सकते थे।

इसके बजाय उन्होंने एक निरपेक्ष विशेषज्ञ समिति का गठन करने का फैसला किया ताकि वह बदलती क्षमताओं और राज्यों की आवश्यकताओं का आकलन करके इसका निर्धारण कर सके और इसी आधार पर केंद्र सरकार द्वारा संग्रहित कर को राज्यों के साथ बांटने और उन्हें अनुदान देने का निर्णय ले सके। सोलहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट एक फरवरी को संसद में पेश की गई और वही अगले पांच साल के लिए संघीय राजकोषीय ढांचा निर्धारित करेगी।

इसका श्रेय उन लोगों को जाता है जिन्होंने आयोग का कार्यक्षेत्र तय किया। उन्होंने न केवल अनुच्छेद 280 में वर्णित कार्यों को आसानी से दोहराया बल्कि आयोग को किसी प्रकार के निर्देश देने से बचने का प्रयास किया। यह अतीत से अलग था। आयोग को भी यह श्रेय जाता है कि उसने किसी तरह की अस्थिरता नहीं पैदा की और उसकी सिफारिशों में स्थिरता और निरंतरता का मजबूत तत्व मौजूद रहता है। आयोग ने संघीय करों के 41 फीसदी के हस्तांतरण को जारी रखा है, लेकिन राजस्व घाटे के लिए अनुदान की सिफारिश करने की प्रथा को समाप्त कर दिया है।

हस्तांतरित करों के क्षैतिज वितरण के लिए, सूत्र में सबसे महत्त्वपूर्ण बदलाव राज्यों के राष्ट्रीय सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में योगदान को शामिल करना है। इस कारक को 10 फीसदी भार दिया गया, जिसके लिए प्रति व्यक्ति आय दूरी और जनसांख्यिकीय प्रदर्शन का भार 2.5 फीसदी अंक तथा क्षेत्र का भार 5 फीसदी अंक घटाया गया। 15वें वित्त आयोग द्वारा कर प्रयास कारक को दिए गए 2.5 फीसदी भार को हटा दिया गया और इसे जनसंख्या हिस्सेदारी को 17.5 फीसदी भार देने में जोड़ा गया।

जनसांख्यिकीय प्रदर्शन का भार 2.5 फीसदी अंक घटाया गया और प्रजनन परिवर्तन के व्युत्क्रम को लेने के बजाय 1971 और 2011 की जनगणनाओं के बीच जनसंख्या वृद्धि के व्युत्क्रम को लिया गया।

इसी प्रकार, वन आवरण चर को उसके घनत्व के आधार पर भारित किया गया। आयोग ने राज्य विशिष्ट और क्षेत्र विशिष्ट अनुदान की सिफारिश करने की प्रथा को समाप्त कर दिया। ऊर्ध्वाधर यानी ऊपर से नीचे होने वाला हस्तांतरण मुख्य रूप से आयोग के इस फैसले पर आधारित होते हैं कि संविधान में संघ और राज्यों को सौंपे गए कार्यों को पूरा करने में उनकी सापेक्ष क्षमताएं और आवश्यकताएं क्या हैं। हालांकि, समांतर हस्तांतरण का मूल्यांकन करते समय यह देखना महत्त्वपूर्ण है कि संघीय प्रणाली में हस्तांतरण के तर्क के साथ वे किस हद तक संरेखित हैं।

हस्तांतरण सामान्य उद्देश्य से भी हो सकते हैं और विशेष उद्देश्य से भी। सामान्य उद्देश्य की बात करें तो इसका लक्ष्य है हर राज्य को समतुल्य राजस्व प्रयास पर समतुल्य स्तर का लोक सेवा प्रदान करना और जिसका अर्थ है, राज्यों की राजस्व और लागत संबंधी अक्षमताओं की भरपाई करना तथा राजस्व प्रयास को प्रोत्साहित करना।

सामान्य उद्देश्य हस्तांतरण बिना शर्त होता है और इससे राज्य अपने निवासियों की विभिन्न प्राथमिकताओं के अनुसार सेवाएं प्रदान करने में सक्षम होते हैं। हालांकि, विशिष्ट अनुदान इस उद्देश्य से दिए जाते हैं कि योग्य मानी जाने वाली सेवाओं या उन सेवाओं के न्यूनतम मानकों को सुनिश्चित किया जा सके जिनमें महत्त्वपूर्ण बाह्य प्रभाव शामिल हों, ताकि प्रत्येक नागरिक को ऐसी सेवाओं का निर्धारित न्यूनतम स्तर उपलब्ध हो सके।

कर विभाजन एक सामान्य उद्देश्य हस्तांतरण है और आयोग द्वारा उसे राज्यों को मोटे तौर पर राजस्व और लागत के अंतर के आधार पर दिया जाता है। 16वें वित्त आयोग ने यह तर्क दिया है कि जीडीपी में योगदान के पैमाने का उपयोग दक्षता के उद्देश्य को पूरा करता है, क्योंकि यह माना जाता है कि इससे राज्यों को अपनी सकल राज्य घरेलू उत्पाद (जीएसडीपी) की वृद्धि को अधिकतम करने के लिए नीतियां लागू करने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा।

यद्यपि सामान्य रूप से यह आकर्षक प्रतीत हो सकता है, लेकिन इस कारक का प्रस्ताव राजस्व अक्षमता कारक से टकराता है और इसकी प्रभावशीलता इसके चुनावी असर पर निर्भर करेगी। और भी महत्त्वपूर्ण यह है कि प्रतिस्पर्धी असमानता से चिह्नित संघवाद में राज्य समान स्तर पर नहीं हैं, और उनकी प्रोत्साहन का प्रतिक्रिया देने की क्षमता भिन्न है। जिन राज्यों के पास बेहतर सामाजिक और भौतिक बुनियादी ढांचे तथा अधिक उत्तरदायी संस्थाएं हैं, वे अन्य राज्यों की तुलना में बेहतर प्रदर्शन करते हैं।

आयोग की सिफारिशों से राजस्व और लागत संबंधी अक्षमताओं की पूरी तरह भरपाई की अपेक्षा नहीं की जा सकती, और कम प्रति व्यक्ति आय वाले राज्यों में बुनियादी ढांचे की कमी बनी रहती है, क्योंकि राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंधन (एफआरबीएम) अधिनियम उन्हें अपने जीएसडीपी के केवल 3 फीसदी तक ही उधार लेने की अनुमति देता है।

राजस्व घाटा अनुदान समाप्त करना भी कुछ सवाल खड़े करता है। राजस्व और लागत अंतर पर आधारित कर विभाजन राज्यों की व्यक्तिगत समस्याओं को हल नहीं करता और अनुदान बेहतर लक्षित करने में मदद करता है। इसके साथ ही निरपेक्ष आकलन को वस्तुनिष्ठ तरीके से नहीं कर पाने से समता और प्रोत्साहन, दोनों तरह की समस्याएं पैदा होती है।

आधार वर्ष के आंकड़ों पर आधारित अनुमान वंचित राज्यों में सेवा स्तर की कमी का समाधान करने में विफल रहते हैं, और आयोग द्वारा बजटीय रिक्तियों को भरने से समय के साथ ये रिक्तियां और बड़ी हो जाती हैं। राजस्व घाटा अनुदान को समाप्त करना इसे टालने का एक तरीका है, लेकिन इससे वित्तीय संरचना का पुनर्संतुलन होता है।

आयोग इस नजरिये से प्रभावित लगता है कि चौदहवें वित्त आयोग ने कर विभाजन को 32 फीसदी से बढ़ाकर 42 फीसदी करके राज्यों के प्रति अनावश्यक उदारता दिखाई। वह अपनी रिपोर्ट में इस बात को कई बार दोहराता है। विडंबना यह है कि आयोग कहीं इस बात को नहीं चिह्नित करता कि पुराने आयोगों के विपरीत चौदहवें आयोग को राज्यों की योजना और गैर योजना दोनों तरह के व्यय का ध्यान रखना था। उसे गाडगिल सूत्र अनुदानों को भी समाहित करना पड़ा था।

इसके अलावा, आयोग ने अलग-अलग क्षेत्र और राज्य विशिष्ट अनुदान देने से परहेज किया। 13वें आयोग ने पर्यावरण, सड़क और पुल, शासन, प्राथमिक शिक्षा और कई राज्य विशिष्ट अनुदानों के लिए अलग अनुदान की सिफारिश की थी। यदि हम केवल कर विकेंद्रीकरण, राजस्व घाटे अनुदान और समाहित गाडगिल सूत्र अनुदानों पर विचार करें, तो अंतर इतना भारी नहीं है।

केंद्र के सकल कर राजस्व में कर हस्तांतरण और राजस्व घाटा अनुदान का हिस्सा 38.5 फीसदी निकलता है, जो 13वें वित्त आयोग द्वारा दिए गए कर हस्तांतरण, राजस्व घाटा अनुदान और गाडगिल सूत्र अनुदानों से थोड़ा अधिक है। यह मामूली वृद्धि इसलिए है क्योंकि आयोग ने संघ को केवल जरूरी सेवाओं तक ही केंद्र प्रायोजित योजनाओं को सीमित करने को प्राथमिकता दी और राज्य सूची के कई क्षेत्रों में प्रवेश न करने को कहा।

यह हमें केंद्र प्रायोजित योजनाओं पर 16वें आयोग के दृष्टिकोण तक ले जाता है। आयोग का कहना है कि केंद्र प्रायोजित योजनाओं ने राष्ट्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। लेकिन क्या वास्तव में ऐसा है? जैसा कि पहले उल्लेख किया गया, विशिष्ट उद्देश्य हस्तांतरण महत्त्वपूर्ण सेवाओं के न्यूनतम मानकों को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हैं। इनमें से कई योजनाएं केवल 1980 के दशक के मध्य से मौजूद 200 से अधिक योजनाओं का सरल संकलन हैं।

वास्तव में, पीवी नरसिंह राव समिति पहली कमिटी थी जिसने 1988 में योजनाओं के बहुतायत होने पर रिपोर्ट दी। ये योजनाएं अधिकांशतः उपकरों से वित्तपोषित होती हैं, जिससे विभाज्य पूल में कमी होती है। इसके अलावा, क्या कोई ऐसी योजना है जिसमें न्यूनतम मानक हासिल करने का उद्देश्य स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट हो? यहां तक कि सर्व शिक्षा अभियान में भी 42 अलग-अलग हस्तक्षेप हैं। नीति आयोग के 2017 में जारी एक्शन एजेंडा पत्र में कहा गया था कि केवल स्वास्थ्य क्षेत्र में ही 2,000 बजट शीर्षक हैं।

सभी योजनाओं का प्रारंभिक आवंटन और अंतिम व्यय पैटर्न अत्यधिक भिन्न है। यहां तक कि मनरेगा (अब जी राम जी) में भी, तमिलनाडु जैसा कम गरीबी अनुपात वाला राज्य बिहार की तुलना में कहीं अधिक आवंटन प्राप्त करता है। यदि इन अहम सेवाओं के अनुदान न्यूनतम मानकों को हासिल करने के लिए डिजाइन और लागू नहीं किए जाते, तो उनसे किस आर्थिक उद्देश्य की अपेक्षा की जाती है?

जनसत्ता

Date: 19-02-26

साझेदारी के आयाम

संपादकीय

बदलते दौर में भू-राजनीतिक उथल-पुथल और अनिश्चितताओं के बीच भारत आर्थिक एवं रणनीतिक स्तर पर सहयोग बढ़ाने के लिए विभिन्न देशों के साथ साझेदारी को और व्यापक बनाने की राह पर आगे बढ़ रहा है। ब्रिटेन, यूरोपीय संघ और अमेरिका के साथ व्यापार समझौतों के बाद भारत ने अब फ्रांस के साथ द्विपक्षीय संबंधों को 'विशेष वैश्विक

रणनीतिक साझेदारी' में बदल दिया है। इसके तहत दोनों देशों ने रक्षा, व्यापार और निवेश समेत कई क्षेत्रों में द्विपक्षीय सहयोग बढ़ाने का संकल्प लिया है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों के बीच मंगलवार को मुंबई में हुई वार्ता के दौरान बनी सहमति के बाद इक्कीस समझौतों को स्वीकृति दी गई। इस साझेदारी को वैश्विक स्थिरता और रणनीतिक दृष्टिकोण से कई मायनों में महत्त्वपूर्ण माना जा रहा है। इससे न केवल द्विपक्षीय व्यापार और आधुनिक प्रौद्योगिकी के आदान-प्रदान में संभावनाओं के नए द्वार खुलेंगे, बल्कि रक्षा के मोर्चे पर भी भारत की स्थिति मजबूत होगी।

पिछले दिनों भारत ने ब्रिटेन और ओमान के साथ व्यापार समझौते किए थे। उसके बाद न्यूजीलैंड और फिर यूरोपीय संघ के साथ मुक्त व्यापार समझौते को अंतिम रूप दिया गया। हाल में भारत और अमेरिका के बीच अंतरिम व्यापार समझौते का एलान किया गया, जिसके परिणामस्वरूप अमेरिका ने भारत पर लगाए गए पचास फीसद शुल्क को घटाकर अठारह फीसद कर दिया। इसमें दोराय नहीं कि अमेरिका की ओर से भारत पर भारी-भरकम शुल्क लगाए जाने के बाद देश का निर्यात कारोबार प्रभावित हुआ। इस संकट से निपटने के लिए भारत ने अपने उत्पादों के वास्ते दुनिया के विभिन्न देशों में वैकल्पिक बाजार तलाशने की हरसंभव कोशिश की तथा व्यापार समझौतों की शक्ल में उसके सफल नतीजे भी सामने आए अब फ्रांस के साथ विशेष वैश्विक रणनीतिक साझेदारी से भारत के व्यापार, प्रौद्योगिकी और रक्षा क्षेत्र में सशक्तीकरण की संभावनाओं को और बल मिलेगा। भारत और फ्रांस ने परस्पर निवेश को बढ़ावा देने के लिए एक विशेष समझौता किया है, जिससे दोनों देशों के नागरिकों और कंपनियों को अब दोहरा कर नहीं देना पड़ेगा। इससे द्विपक्षीय व्यापार, निवेश और आवागमन को नई गति मिलेगी। गौरतलब है कि फ्रांस की मदद से कर्नाटक के वेमागल में एयरबस एच-125 हेलिकाप्टरों के निर्माण के लिए कलपुर्जों को जोड़ने का कारखाना भी स्थापित किया गया है, जहां अब काम शुरू हो गया है। यहां दुनिया के ऐसे शक्तिशाली हेलिकाप्टर का निर्माण किया जाएगा, जो विश्व की सबसे ऊंची पर्वत चोटी माउंट एवरेस्ट की ऊंचाई तक उड़ान भरने में सक्षम होगा। द्विपक्षीय रक्षा सहयोग बढ़ाने के लिए भारत और फ्रांस के बीच 'हमर' मिसाइलों के उत्पादन को लेकर भी अहम समझौता हुआ है। इसके तहत भारत इलेक्ट्रानिक्स लिमिटेड और फ्रांसीसी रक्षा कंपनी सैफरान संयुक्त उद्यम स्थापित करेगी। यह सच है कि फ्रांस, भारत के सबसे पुराने रणनीतिक साझेदारों में से एक है और अब दोनों देशों के बीच सहयोग का नया अध्याय शुरू हो रहा है। विशेष वैश्विक रणनीतिक साझेदारी की पहल फ्रांस की विशेषज्ञता और भारत की विशाल क्षमता को एक साथ लाने का प्रयास है और इससे निश्चित तौर पर भारत की विनिर्माण एवं निर्यात क्षमताओं में इजाफा होगा।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 19-02-26

फ्रांस से दोस्ती का खुशनुमा दौर,

टीसीए रंगाचारी, (फ्रांस में रहे भारतीय राजदूत)

फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों का भारत दौरा काफी व्यस्त रहा। अपनी तीन दिवसीय इस यात्रा में उन्होंने 'एआई इम्पैक्ट समिट' में भाग लिया, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के साथ द्विपक्षीय बातचीत की और मुंबई में 'भारत-फ्रांस नवाचार वर्ष 2026' की शुरुआत भी की। इन सबके बीच, भारत-फ्रांस रिश्ते को 'विशेष वैश्विक रणनीतिक साझेदारी' तक ले जाने के लिए दोनों नेताओं ने रक्षा, खनिज, उच्च प्रौद्योगिकी, ऊर्जा जैसे तमाम अहम क्षेत्रों में 21 समझौते किए। ये सभी कितनी अहमियत रखते हैं, इसका अंदाजा मौजूदा वैश्विक हालात से होता है। गौरतलब है कि ऐतिहासिकतौरपर हिन्दुस्तान 'कूटनीतिक स्वायत्तता' को प्रोत्साहित करता रहा है और फ्रांस की भी यही नीति रही है। लिहाजा, मौजूदा विश्व व्यवस्था में, जहां बहुध्रुवीय मंचों के अस्तित्व संकट में हैं, रिश्ते द्विपक्षीय आधार पर तय किए जा रहे हैं और 'एक देश' अपने हित को सबसे ऊपर रखने के लिए कई तरह के फैसले ले रहा है, तब भारत और फ्रांस, जो क्रमशः दुनिया की चौथी व सातवीं बड़ी आर्थिक ताकतें हैं, अगर मिलकर मौजूदा वैश्विक मुद्दों का हल तलाशने की कोशिश करते हैं, तो उसके सुखद नतीजे ही निकलेंगे। अच्छी बात है कि दोनों देश ऐसे समाधान की तलाश में हैं, जिसका फायदा पूरी दुनिया को हो। दोनों नियम- आधारित विश्व व्यवस्था के हिमायती हैं। प्रधानमंत्री मोदी ने कहा भी कि ऐसे समय में, जब 'दुनिया ने अनिश्चितता के दौर से गुजर रही हो, तब भारत-फ्रांस की दोस्ती 'वैश्विक स्थिरता के लिए एक ताकत' के तौर पर खड़ी है।

द्विपक्षीय संबंधों का विस्तार इसकामहज एक हिस्सा है। भारत और फ्रांस जी-7 के दो ऐसे मुल्क हैं, जहां राजनीतिक स्थिरता है और उनकी आर्थिक उन्नति लगातार हो रही है। कई दशकों से दोनों दोस्त रहे हैं और कूटनीतिक स्वायत्तता की नीति अपनाने के कारणदोनों एक-दूसरे की इज्जत भी करते हैं। इस कारण भी, दोनों देश विश्व के कल्याण के साथ-साथ एक-दूसरे की भलाई के लिए मिलकर काम कर रहे हैं।

इस लिहाज से देखें, तो राष्ट्रपति मैक्रों की यात्रा काफी सकारात्मक रही। विशेषकर वैज्ञानिक ज्ञान, अनुसंधान और नवाचार के महत्व को प्रोत्साहित करने परदोनों नेताओं का सहमत होना उल्लेखनीय है। इसके केंद्र में एआई ही है। दोनों नेताओं ने नई दिल्ली के एम्स में एआई की शुरुआत करने पर सहमति जताई है। यानी, आने वाले दिनों में यहां 'मेडिकल डाटा' का इस्तेमाल होगा, जिससे इलाज में आसानी होगी। किस रोगी को किस तरह का इलाज चाहिए, इसका पता जल्द चल सकेगा। दोनों नेताओं का एआई पर रुख करीब-करीब एक है। दोनों मानते हैं कि इससे जो भी फायदा हो, वह सब तक पहुंचे। अमेरिका में जरूर एआई को लेकर काफी काम हो रहा है, लेकिन मोदी और मैक्रों यही मानते हैं कि इसका लाभ कुछ कंपनियों या उद्योगों तक ही सिमटा न रहे। यही कारण है कि एआई शासन में वैश्विक नियम-कानून की वकालत की जा रही है, ताकि इसका समावेशी लाभ मिले।

नवाचार वर्ष होने से दोनों देश स्टार्टअप, शैक्षणिक संस्थानों, शोध संस्थानों और उद्योगों के बीच मौजूदा सहयोग को विस्तार देने पर काम करेंगे, जिससे स्वाभाविक ही नए अवसर पैदा हो सकते हैं। वैसे भी, जब भारत जैसे देश गरीबी और बेरोजगारी जैसी समस्याओं से जूझ रहे हों, तब ऐसी तकनीक को प्रोत्साहित करने की मांग की जाती है, जो इनसमस्याओं का समाधान निकालने में सक्षम हो। एआई इसमें हमारे बहुत काम आ सकती है। मैक्रों का यह दौरा बताता है कि भारत और फ्रांस एक स्मार्ट व अधिक टिकाऊ भविष्य के लिए समाधान विकसित करने की दिशा में प्रतिबद्ध हैं और पूर्व की तरह आगे भी साथ मिलकर काम करना चाहते हैं।

दोनों देशों का द्विपक्षीय रक्षा सहयोग समझौते को अगले 10 वर्षों के लिए नवीकृत करना भी उल्लेखनीय है। गौरतलब है, 2025 के नवंबर माह में डीजीए और डीआरडीओ के बीच रक्षा प्रौद्योगिकियों में सहयोग के लिए एक तकनीकी

समझौता किया गया था, जो दोनों एजेंसियों के बीच शोध व विकासमें गहरी साझेदारी का मंच बनेगा। अब राफेल खरीदने और हैमर मिसाइल के स्वदेशी निर्माण पर दोनों देशों ने सहमति जताई है। फ्रांस वर्षों से भारत को वायु सुरक्षा से जुड़ी तकनीक देने को इच्छुक था, वह अलग-अलग जहाजों के लिए अलग- अलग असेंबली लाइन लगाने को भी तैयार था, लेकिन हमने ही कुछ हद तक अपने कदम आगे नहीं बढ़ाए। इसकी वजह क्या थी, यह तो इतिहास के पन्नों में दर्ज है, लेकिन यह अच्छा है कि इस सरकार ने समस्याओं का हल तलाशते हुए 'असेंबली लाइन' लगाने में सफलता पा ली है। अब देखना यह है कि जब दोनों तरफ से इस बाबत सहमति बन गई है, तो हम किस तरह से इसका अधिकाधिक फायदा उठा पाते हैं। और साझा निर्माण को क्रियान्वित कर पाते हैं। शुरुआत अच्छी जान पड़रही है, क्योंकि दोनों नेताओं ने एयरबस एच 125 हेलीकॉप्टर की फाइनल असेंबली लाइन का उद्घाटन भी किया है।

हालांकि, राष्ट्रपति मैक्रों की यात्रा को महज समझौते के चश्मे से नहीं देखना चाहिए। दरअसल, जब विश्व के नेता आपस में मिलते हैं, तो अलग-अलग मसलों पर उनमें बातचीत होती है। इससे विदेश संबंध को एक दिशा मिलती है। जरूरी यह भी नहीं कि हमेशा मुलाकात द्विपक्षीय माहौल में हो। बेशक, राष्ट्रपति मैक्रों की यह भारत की चौथी यात्रा थी, लेकिन प्रधानमंत्री मोदी के साथ अलग-अलग मंचों और अलग-अलग माहौल में संभवतः 20 से अधिक बार उनकी मुलाकात हो चुकी है। यह बताता है कि दोनों नेताओं की आपस में कितनी बन रही है।

कुल मिलाकर, फ्रांस के राष्ट्रपति का यह दौरा बहुत सकारात्मक रहा। अभी यूरोप की अपनी समस्याएं भी कम नहीं हैं। अमेरिका के साथ उसके रिश्ते हों या यूक्रेन युद्ध से जुड़े मसले या फिर चीन के साथ संबंध - यूरोप फिलहाल अपनी चिंताओं में उलझा हुआ है। इस स्थिति में भी यदि वह अपना हाथ भारत की तरफ बढ़ा रहा है, तो इसका संकेत यही है कि उसे भरोसा है कि हिन्दुस्तान उसके हित में अपनी भूमिका निभा सकता है। जनवरी में यूरोपीय संघ के साथ हुई मुक्त व्यापार संधि (जिसे 'सभी संधियों की जननी' कहा जाता है) और अब फ्रांस के साथ रक्षा सहित तमाम समझौतों पर बनी सहमति का यही मूल संदेश है।